श्रीगुरुमाई के वचनों पर ध्यान

महाशिवरात्रि

ईशा सरदेसाई द्वारा लिखित

"दर्शन बुक करना"

गुरुमाई जी ने सत्संग के दौरान, सात साल की एक बच्ची के साथ घटित एक प्रसंग सुनाया। यह बच्ची अपने माता-पिता के साथ श्री मुक्तानन्द आश्रम आई थी जो सेवा करने आश्रम आए हुए थे। आते ही उसने उनसे पूछा, "क्या आपने गुरुमाई जी के साथ दर्शन बुक कर लिए हैं?"

जब गुरुमाई जी ने यह प्रसंग सुनाया तो उनके साथ हम सब भी हँस पड़े। गुरुमाई जी ने कहा, "मुझे भी यह सुनना अच्छा लगा। हम निश्चित ही एक नव, नवीन संसार में हैं।"

और फिर उन्होंने कहा, "क्यों नहीं, है न? बस बुक कर लो। दर्शन किसी भी समय हो सकते हैं। तो क्यों न बुक कर लो?"

जब भी मैं गुरुमाई जी के साथ सत्संग में होती हूँ तो मेरे साथ अकसर ही यह होता है जो इस बार भी हुआ, मेरे मन में कई विचार एक-साथ उमड़ने लगे। कई भावनाएँ, कई रंग और छवियाँ। दर्शन पाने की उस नन्हीं बच्ची की आकांक्षा ने मेरे मन को छू लिया। उसने जिस तरीक़े से यह बात कही, उससे मुझे मज़ा आया। और मैं बहुत द्रवित हो गई जब गुरुमाई जी ने कहा, "क्यों नहीं?"

हाँ, बच्ची ने जो कहा, वह बड़ा मज़ेदार, प्यारा और लुभाने वाला था। और साथ ही मैंने यह भी महसूस किया कि गुरुमाई जी ने इस बच्ची को पूरी तरह समझते हुए उत्तर दिया। मुझे महसूस हुआ कि गुरुमाई जी उस बच्ची की ललक को समझ रही हैं और उस ललक का उत्तर बहुत ध्यान देकर व गम्भीरता से दे रही हैं।

यह ग़ौर करने वाली बात है कि यह बच्ची सात साल की है। उसका पूरा जीवन अत्यधिक डिजिटल संसार के बीच बीता है, जहाँ कार्य-कुशलता और सुख-सुविधा का भारी महत्त्व है। गुरुमाई जी ने इसका वर्णन करते हुए कहा, "एक नव, नवीन संसार।" ऐसा संसार जिसमें हमें जो चाहिए, उसमें से अधिकांश चीज़ें हमें बस अपनी उंगलियों से कुछ बटन दबाते ही हासिल हो जाती हैं। इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो उस नन्हीं बच्ची के शब्दों का चयन पूरी तरह तर्कसंगत है। उसे क्या चाहिए यह बताने व पाने के लिए वह उन शब्दों का प्रयोग कर रही थी जिनसे वह परिचित थी, वह उस भाषा का प्रयोग कर रही थी जो उसने अपने जीवन में बड़ों से सुनी थी।

परन्तु, इससे एक दिलचस्प सवाल उठता है। वह *क्या था* जो उसे चाहिए था? महाशिवरात्रि के कुछ दिन बाद मैं गुरुमाई जी से बात कर रही थी और मैंने उनसे कहा कि सत्संग का यह क्षण मुझे कितना आनन्दमय लगा। गुरुमाई जी ने मुझे बताया कि जिस समय इस बच्ची ने अपनी इच्छा ज़ाहिर की, उस समय तक उसने गुरुमाई जी के साक्षात् दर्शन नहीं किए थे। इसका उसे कोई अनुभव नहीं था। हो सकता है कि उसने अपने माता-पिता से साक्षात् दर्शन के बारे में सुना हो लेकिन श्रीगुरु की साक्षात् उपस्थिति में होने का खुद उसके पास कोई सन्दर्भ नहीं था।

फिर भी, उसे अन्दर से *मालूम था* कि उसे दर्शन चाहिए। तो उसके लिए दर्शन का क्या अर्थ था? गुरुमाई जी के दर्शन पाना उसके लिए इतना महत्त्वपूर्ण क्यों था? दर्शन के विषय में उसने क्या कल्पना की होगी? गुरुमाई जी से मिलना, उनके साथ होना, उनसे बात करना कैसा होगा, इस बारे में उसने क्या कल्पना की होगी? श्रीगुरु के सान्निध्य में होने की रूपान्तरणकारी शक्ति क्या होती है, इस बारे में, उसने अपने अवचेतन मन में ही सही, पर क्या समझा होगा? उसके पास सात साल थे—उसके लिए, उसका पूरा जीवनकाल—जिसमें उसने अपनी इस ललक को बढ़ाया होगा। उसे दर्शन के विषय में अपने अन्तर में पहले से क्या समझ होगी?

मैंने पहले गुरुमाई जी को यह कहते सुना है कि बच्चे विशेष रूप से भगवान के क़रीब होते हैं। मुझे इसका यह अर्थ समझ में आया है कि वे अब भी उस स्रोत से बहुत दूर नहीं होते जिससे वे और हम उत्पन्न हुए हैं। इस नन्हीं-सी बच्ची में दर्शन की ललक थी, उस अनुभव की ललक, जिससे वह एक तरह से अनजान थी—और उसी ललक में शायद निहित थी, एक अन्तर्जात पहचान, एक आन्तरिक बोध। यह वह पहचान, वह अन्तर-बोध है जो हमारे अन्दर शायद तब जगता है, जब उदाहरणार्थ हम एक भव्य, ऊँचे पर्वत के सामने खड़े होते हैं, या तब, जब हम किसी झरने के रुपहले-नीले पानी को निहार रहे होते हैं। यह वह आन्तरिक बोध है जो नृत्य करती लौ को देखकर हमारे अन्दर जाग उठता है, या फिर दूर तक फैले महासागर अथवा आकाश को देखने से हमारे हृदय में अचानक कौंध जाता है। यह अन्तर्जात पहचान, यह आन्तरिक बोध है, ऐक्य का, यह एक गहरा एहसास है कि हम घर लौट आए हैं, उसके पास आ गए हैं जिसके हम सदा से ही थे।

'बुक करना' और 'दर्शन करना,' ये दोनों वाक्यांश जो उस बच्ची ने प्रयोग किए, सोचने में मनमोहक हैं, विशेषकर इस पार्श्वभूमि को ध्यान में रखते हुए। उसने जो इन दोनों वाक्यांशों का एक-साथ प्रयोग किया, वह मुझे बड़ा प्यारा लगा और निस्सन्देह सबके साथ-साथ मैं भी उसकी इस पसन्द पर हँस पड़ी थी। क्या विचार है, है न? कि हम दर्शन "बुक" कर सकते हैं, वैसे ही जैसे हम रोज़मर्रा की किसी अन्य चीज़ को बुक कर सकते हैं? कि हम दर्शन जैसी इतनी बहुमूल्य, इतनी महान चीज़ को भी, जब चाहें तब "अपनी माँग के अनुसार" प्राप्त कर सकते हैं?

तथापि, जैसा कि मैंने पहले भी बताया, गुरुमाई जी ने इसका उत्तर देते हुए कहा, "क्यों नहीं?" उन्होंने इस छोटी बच्ची के विचार को कितना महत्त्व दिया। इस बात ने मुझे ठहरने पर मजबूर कर दिया। और फिर मैंने खुद से यही सवाल पूछा, "क्यों नहीं? जब हम चाहें तब हम दर्शन *क्यों नहीं कर सकते?*"

अब, हम *सदेह रूप में* तो गुरुमाई जी के दर्शन "बुक" नहीं कर सकते। भौतिक रूप से श्रीगुरु का सान्निध्य इस तरीक़े से नहीं मिल सकता। परन्तु दर्शन अपने आपमें, एक आध्यात्मिक अभ्यास के रूप में इस तरह *हो सकते हैं।* इस तरह दर्शन *अवश्य* मिल सकते हैं। गुरुमाई जी हमें सिखाती हैं कि दर्शन हृदय में होते हैं। हमें यहीं, अभी, इसी समय श्रीगुरु की ज्योतिर्मयी उपस्थिति की पूर्ण अनुभूति हो सकती है। इस अनुभूति को पाने के लिए हमें कहीं जाने की ज़रूरत नहीं।

सन्त-कवि कबीर जी द्वारा रचित एक सुन्दर भजन है जो गुरुमाई जी ने सत्संगों में कई बार गाया है। वह इसी विषय में है। कबीर साहिब इस भजन में, भगवान व श्रीगुरु के दृष्टिकोण से कहते हैं :

> अरे मेरे प्यारे, तुम मुझे कहाँ ढूँढ़ रहे हो?
> मैं तो तुम्हारे साथ ही हूँ। मैं तुम्हारे निकट ही हूँ। मैं तुम्हारे हृदय में रहता हूँ।[१]

सन्त-कवि भजन में आगे विस्तारपूर्वक समझाते हैं कि वास्तव में "वह" न मन्दिर में रहता है, न मस्जिद में रहता है, न काशी में, न कैलास पर्वत पर रहता है। वह अवध-द्वारिका जैसे तीर्थस्थानों में नहीं रहता। बल्कि वह तो मनुष्य के विश्वास में, उसके अपने हृदय में मिलता है।

महाशिवरात्रि के सत्संग के दौरान, मुझे लगा कि हम इस प्रज्ञान का, इस समझ का अभ्यास कर रहे हैं। मैंने पहले भी लिखा है कि 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र भगवान शिव का स्वरूप है। मन्त्रधुन गाकर हम वास्तव में भगवान के दर्शन कर रहे थे। हम महादेव के सान्निध्य में थे। हम आदिगुरु के समक्ष आ गए थे। और हम स्वयं को इस अनुभूति के प्रति ग्रहणशील बना रहे थे कि भगवान, श्रीगुरु और आत्मा एक ही हैं।

सिद्धयोग पथ की वेबसाइट पर आपके विचार व चिन्तन-मनन पढ़ना मुझे पसन्द है, इसका एक कारण यह है कि आप अकसर बताते रहते हैं कि आपको श्रीगुरु के सान्निध्य की अनुभूति किस प्रकार होती है, भले ही आप विश्व में कहीं भी हों। हाल ही में, स्विट्ज़रलैण्ड के कोनोलफ़िंगन शहर में रहने वाले एक सिद्धयोगी ने 'श्रीगुरुमाई के वचनों पर ध्यान' की मेरी इस शृंखला के परिचयात्मक भाग को पढ़कर अपना यह अनुभव साझा किया :

> गुरुमाई जी के साथ हुए महाशिवरात्रि के सत्संग के कुछ ही दिनों बाद, श्रीगुरु के भौतिक स्वरूप के सान्निध्य में रहने की मेरी तड़प और भी तीव्र हो गई और मैं कल्पना करने लगा कि गुरुमाई जी के भौतिक सान्निध्य में रहना कितना अद्‌भुत होता होगा। आज, श्रीगुरुगीता का पाठ करने के बाद . . . मुझे महसूस हुआ कि गुरुमाई जी का वास मेरे हृदय में है—वे भगवान के साथ और मेरी अपनी परम आत्मा के साथ एक हैं। वे इससे ज़्यादा मेरे निकट तो हो ही नहीं सकतीं!

इन सिद्धयोगी ने जो समझ साझा की है वह अन्तःप्रेरित है और *प्रेरणादायी* भी। मुझे यह सशक्त करने वाली भी लगती है। यह समझ मुझे यह पूछने के लिए प्रोत्साहित करती है, "हम अपने हृदय में गुरुमाई जी के सान्निध्य की अनुभूति सतत कर सकते हैं, इस समझ का, इस रूपान्तरणकारी ज्ञान का मैं अपने जीवन में उपयोग किस प्रकार करूँगी और हम किस प्रकार करेंगे?"

मैं उस बात पर पुनः लौटती हूँ जो उस सात साल की बच्ची ने कही थी, वह मासूम-सा प्रज्ञान जो उसकी यादगार अभिव्यक्ति में सिमटा हुआ है। उसने "दर्शन बुक करने" के बारे में कहा—यानी दर्शन की योजना बनाने के बारे में कहा, एक तरह से उसने भगवान से 'अपॉइण्टमेण्ट' लेने यानी उनके साथ मुलाक़ात का समय तय करने की बात कही। किसी चीज़ को बुक करने हेतु, पहले आवश्यक है, उसके लिए संकल्प बनाना। इसके लिए पहले से सोचना और योजना बनाना ज़रूरी होता है। यह सच है [और निश्चित ही यह मेरा अनुभव भी है] कि सिद्धयोग पथ पर, हमें अनायास ही अपने हृदय में श्रीगुरु के सान्निध्य का एहसास हो सकता है और ज़रूरी नहीं कि हमने इसकी उम्मीद की हो। जब ऐसा होता है, तब हमारे आस-पास का वातावरण अचानक प्रकाश में नहा उठता है; मानो एक संगीत-सा गूँजने लगता है जो हमें अपने अन्दर सुनाई देता है।

परन्तु हम अधिक जागरूकता व नियमितता से यह विकल्प भी चुन सकते हैं कि हमें दर्शन की अनभूति करनी है। हमें इन्तज़ार करने की ज़रूरत नहीं कि स्वर्ग का वह तथाकथित प्रकाश हमारे ऊपर चमकेगा और तभी हमें इसका अनुभव होगा। हम पहल कर सकते हैं। हम हर रोज़ अपनी श्रीगुरु के साथ होने के लिए, अपने हृदय में श्रीगुरु के दर्शन करने के लिए एक समय तय कर सकते हैं। इसके लिए हम उनसे नियमित रूप से अपॉइण्टमेण्ट या समय ले सकते हैं! ज़रा उन सभी अपॉइण्टमेण्टस् और कार्यक्रमों के बारे में सोचें जिनसे हम अपने कैलेण्डर को भर देते हैं। क्यों न दर्शन को भी उनमें से एक बना लें? क्यों न दर्शन को सबसे ख़ास और अनिवार्य अपॉइण्टमेण्ट बना लें?

पिछले साल हमने बारीकी से देखा कि हमारे जीवन का स्वरूप और उसकी दिशा भी इस बात से तय होती है कि हम अपने समय का उपयोग किस तरह करते हैं। हम सबके जीवन में अपने-अपने दैनिक कर्तव्य हैं, अपनी व्यक्तिगत और व्यावसायिक ज़िम्मेदारियाँ हैं, जिन्हें हमें निभाना है। हम अपने समय को लेकर भी ऐसे निर्णय ले सकते हैं जिनसे हम अपने जीवन की वर्तमान दिनचर्या में भी मांगल्य को बढ़ा सकें।

यह सब कहने के बाद, मैं इसे आप पर छोड़ती हूँ। जब आप गुरुमाई जी के दर्शन पाने के बारे में सोच रहे हों और आप अपने लिए गुरुमाई जी के "दर्शन बुक" करना चाह रहे हों, तब दर्शन का आपके लिए क्या अर्थ होता है? क्या आप दर्शन से किसी विशेष लाभ की उम्मीद रखते हैं? या आप दर्शन के जादू को उस तरह प्रकट होने देते हैं, जैसा वह होगा?

© २०२६ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

---

[१] मोको कहाँ तू ढूँढ़े बन्दे, अंग्रेज़ी भाषान्तर © २०२६ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®।